Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 6 | ISSN : 2582-0095

शिक्षा में बदलाव किस ओर

डॉ0 विनय कुमार
प्राचार्य
त्रिवेणी कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
नवादा, बिहार, भारत।

Article Info
Volume 3 Issue 6
Page Number: 55-59

Publication Issue :
November-December-2020

Article History
Accepted : 01 Dec 2020
Published : 25 Dec 2020

सारांश– प्रकृति में प्रत्येक को वृद्धि के लिए छूट होती है। न तो वायु के प्रवाह में कोई भेदभाव किया जाता है और न ही धूप के पहुंचने में कोई रोक–टोक। वर्षा सभी को समान रूप से अमृत का सिंचन करती है। ठीक इसी भांति शिक्षा में बदलाव होना आवश्यक है किन्तु यह बदलाव ऐसे किया जाए ताकि सभी एक साथ बढ़ सकें, एक–दूसरे की मदद करते हुए समाज को आगे ले जा सकें और किसी प्रकार की ऊंच–नीच या भेदभाव का कोई स्थान न हो। बदलाव की दिशा सामाजिक, राजनीति से प्रेरित न होकर इसका उद्देश्य एक प्रगतिशील समाज का गठन होना चाहिए।

मुख्य शब्द– शिक्षा, सामाजिक, राजनीति, बदलाव, शिक्षक, ज्ञान, कौशल।

हमारी शिक्षा पद्धति सदियों से शिक्षक केंद्रित रही है। प्राचीन काल में शिष्य आचार्य से उनके उपदेशों और जीवन के गूढ़ अनुभवों को सुनकर तथा उनके अनुदेशों के अनुसार अभ्यास कर ज्ञान और कौशल में प्रवीणता अर्जित करते थे। परवर्ती काल में शिक्षा का उद्देश्य सीमित होकर परीक्षा में उत्तीर्ण होने तक सिमट कर रहा गया। आज पठन–पाठन की प्रक्रिया में अध्यापक सदैव सक्रिय दिखाई देता है जबकि छात्र निष्क्रिय और निष्चेष्ट। आज समय और समाज के कुप्रभावों से ग्रसित होकर अध्यापक न केवल अपनी चारित्रिक प्रखरता खो बैठा है अपितु वह छात्रों पर अपने प्रभुत्व से भी हाथ धो बैठा है।

शिक्षा प्राप्ति के अधिकार के प्रति जागरूक वर्तमान समाज में सभी को शिक्षा मिले इस पर तो एकमत है परन्तु आवश्यक संख्या में प्रशिक्षित और चरित्रवान अध्यापकों की नियुक्ति और उन्हें उचित सेवा की शर्तें देने के दायित्व से हम पीछे हट जाते हैं। परिणामतः यह दायित्वपूर्ण भविष्य निर्माण का कार्य दैनिक वेतनभोगी शिक्षाकर्मियों, ठेके पर लिये गए कम योग्य शिक्षकों या फिर ऐसे 'पढ़े–लिखे शिल्पकारों' के हाथ में आ गया जो येन–केन–प्रकारेण परीक्षा की दरिया को पार कराने की कला में दक्ष हैं, कोचिंग

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

कक्षाओं में धन बटोरते हुए अपना पद दूसरे के पास अल्कालिक गिरवी रखकर वेतन का बंदरवाट कर सकते हैं या फिर कम से कम वेतन पर प्रबंधकों के पास अपने को बेच सकते हैं। सरकारी, गैर–सरकारी स्कूलों, कॉलेजों में शिक्षकों के हजारों पद खाली पड़े हैं परन्तु इनकों भरने के प्रयास अक्सर विफल हो जाते हैं क्योंकि अनगिनत परस्पर विरोध नियमों के चलते प्रत्येक चयन समिति राजनीति का अखाड़ा बन जाती है। चयन प्रक्रिया इतनी जटिल हो गई है कि कोई भी सभ्य और न्यायप्रिय अधिकारी अपने ऊपर आंच नहीं आने देना चाहता।

पत्र–पत्रिकाओं में आए दिन ऐसे समाचार पढ़ने को मिलते हैं जो अध्यापक वर्ग की चारित्रिक अवनति या उनकी झुझलाहट को दर्शाते हैं। छात्र–छात्राओं पर उनके द्वारा किए गए अमानवीय व्यवहार जहां उनके चयन पर प्रश्नचिन्ह लगाते हैं, वहीं यह प्रवृत्ति कदाचित अध्यापक की गिरती हुई साख के प्रति उनके विद्रोहात्मक मनोभाव को भी उजागर करता है। यथार्थ और उपयोगिता से प्रेरित होकर आज छात्र अध्यापक को केवल एक सामान्य सेवारत नौकर की मान्यता देता है। भक्ति और श्रद्धा के स्थान पर कार्य सिद्धि और परीक्षा में पास होने में मदद की क्षमता के आधार पर उनके महत्व को आंकता है। कक्षा में उपस्थिति तो केवल एक सामान्य औपचारिकता मात्र रह गया है। असली पढ़ाई के लिए वे कोचिंग क्लास या ट्यूशन में जाना अधिक लाभदायी मानते हैं। ऐसी परिस्थिति में अध्यापक को अपने वर्ग समूह का अस्तित्व बनाए रखने के लिए अपनी आवश्यकता और उपयोगिता को नये सिरे से सिद्ध करना होगा।

अतः उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि आज की शिक्षा पद्धति अध्यापक द्वारा निर्देशित न होकर छात्रों की आवश्यकता और माता–पिता की आकांक्षाओं से संचालित हो रहा है। परिवर्ततन के इस दौर में अध्यापक एक और नये प्रकार के उलझन से गुजर रहा है। अभी तक वह कक्षा के अधिपित और अध्यापन प्रक्रिया के संचालक के रूप में भावी पीढ़ी को सांस्कृतिक धरोहर का हस्तांतरण व्यवहार कुशलता के साथ सोद्देश्य कर रहा था। प्रशिक्षण के दौरान उसे यह बताया गया था कि ज्ञान, कौशल और अनुभवों के माध्यम से छात्र–छात्रओं के व्यवहार में परिवर्त्तन लाना ही शिक्षा है। तदनुसार, उसका कार्य था अपनी विद्वता और चारित्रिक विशेषताओं की छाप छात्रों पर छोड़ कर उन्हें समाज का उपयोगी नागरिक बनाना।

परन्तु हाल ही में राष्ट्रीय स्तर पर नवीन पाठ्यचर्या तथा नवीन विचारधारा के अनुसार निर्मित पाठ्य–पुस्तकों द्वारा उसे यह मनवाने का प्रयास किया जा रहा है कि सूचना युग से होकर ज्ञान के युग में प्रवेश का मूलमंत्र कुछ और ही है। इस विचारधारा के अनुसार शिक्षा या ज्ञान कोई भौतिक वस्तु नहीं है जिसका हस्तातंरण किया जा सके। सीखना मूल रूप से व्यक्तिगत और काफी हद तक सामाजिक प्रक्रिया है। इसको सार्थक बनाने के लिए अध्यापक को अपनी भूमिका में बदलाव लाना होगा। उसे अपनी विद्वता

और सक्रियता को जाहिर करने के स्थान पर छात्रों को सक्रिय करना होगा, उन्हें ज्ञान की रचना करने के लिए विविध अवसर देने होंगे तथा उनकी स्मृति की परीक्षा न लेकर उनमें उच्च स्तरीय चिंतन शक्ति का विकास करना होगा। दूसरे शब्दों में अध्यापक को अपनी पारंपरिक भूमिका को विसार कर एक सरल, पथ प्रदर्शक तथा परामर्श दाता की भूमिका निभानी होगी। शिक्षा का यह नया परिदृश्य अध्यापक के सामने एक नयी चुनौती लेकर आया है। यह चुनौती तब और विकट रूप में सामने आती है जब इसे वर्तमान स्कूली परिदृश्य के आइने में देखते हैं। जहां विद्यालयों में ब्लैकबोर्ड तक नहीं हैं, बैठने का टाट–पट्टी नहीं है, एक या दो अध्यापक सौ या इनसे अधिक बच्चों को सभी विषय पढ़ाने का काम करते हैं, बिजली पानी को कोई व्यवस्था नहीं है, और बाहरी शोर के कारण भीतर कुछ सुनाई नहीं देता–ऐसी विषम परिस्थितियों में छात्रों द्वारा ज्ञान का सृजन कैसे हो, अध्यापक शैक्षिक प्रौद्योगिकी का प्रयोग कैसे करे, शिक्षा को सूचना के स्तर से उठाकर समझ और प्रयोगात्मक स्तर पर कैसे लाया जाए।

शिक्षा के क्षेत्र में बदलाव का एक और स्वरूप हमारे सामने तब आत है जब वर्तमान राजनीतिक अनिवार्यताओं के चलते समाज में समता स्थापित करने के लिए नित्य नये फार्मूलों को अपनाया जाता है। ये प्रयास जहां सामाजिक न्याय की पुष्टि से उचित ठहराए जा सकते हैं कहीं यह भी सुनिश्चित करना जरूरी है कि समता के नाम पर उठाए गए कदम समाज को पुनः विषमता को एक और खाई की ओर न ले जाते हों। समाज स्वस्थ रूप से तभी आगे बढ़ सकता है जब इसमें सभी वर्गों के बीच सौहार्द का वातावरण बना रहे।

शिक्षा में बदलाव की इस हवा ने तो बालिकाओं को नया जीवनदान ही दे दिया है। आज बालिकाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। प्रत्यक्षतः यह एक अच्छी बात है परन्तु उनके जन्म पर, उनके बड़े होने तक उसके मां बनने पर, नौकरी लगने पर लगातार रियायत, आर्थिक सुविधा और प्रशासनिक रूप से प्राथमिकता देना बालिकाओं के निर्मल मानस पर, उनके परिश्रम से अर्जित प्रवीणता पर, उनकी भाषी आशाओं–आकांक्षाओं पर किस प्रकार की दुश्चिेता और मानसिक कुंठा का सृजन करती है, उस और भी सतर्कता बरतना अत्यावश्यक है। माता–पिता यह भूल जाते हैं कि लड़का और लड़की दोनों की प्रकृति प्रदत्त विशेषताएं है, जीवन संग्राम में दोनों एक–दूसरे के पूरक हैं। समाज में उनके विशिष्ट दायित्व हैं।

अक्सर यह सुनने में आता है कि बस्ते का बोझ कम किया जा रहा है। यह भी कहा जा रहा है परीक्षा पद्वति की छात्रानुकूल बनाने के अभूतपूर्व प्रयास किए जा रहे हैं परन्तु दुर्भाग्यवश वास्तविकता यह है कि प्रतिदिन मासूम बच्चे परीक्षा के तनाव या परीक्षाफल को लेकर आशंका के कारण आत्महत्या कर रहे हैं। स्पर्धा की अंतहीन होड़ में फंसकर माता–पिता बच्चों पर अवांछित मानसिक दबाव डालते हैं। बच्चों के

भविष्य को सबसे अच्छा बनाने की मृगतृष्णा उन्हें अंधा बना देती है। उन्हें बच्चों की क्षमता, रूचि, इच्छा या रूझान का कोई ख्याल हीं नहीं रहता। परिवार इतने छोटे हो गए हैं कि बच्चे किसी को मिल नहीं पाते, किसी को अपनी मन की बात बना नहीं पाते और किसी पर भरोसा नहीं कर पाते। माता–पिता इतने व्यस्त हो गए हैं कि उनके पास बच्चों की भावनाओं या शिकायतों को सुनने का न तो समय है और न धैर्य। ऐसी स्थिति में शिक्षा में यत्र–तत्र बदलाव कितना कारगर सि़द्ध हो सकेगा।

शिक्षा में बदलाव होना आवश्यक है किंतु यह बदलाव ऐसे किया जाए ताकि सभी एक साथ बढ़ सकें, एक दूसरे की मदद करते हुए समाज को आगे ले जा सकें और किसी प्रकार की ऊँच–नीच या भेदभाव का कोई स्थान न हो।

शिक्षा में बदलाव का एक और आधुनिक मसीहा है–सूचना प्रौद्योगिकी! पठन–पाठन की ग्राह्यता, संप्रेषण की प्रभावशीलता तथा अध्यापन की गुणवत्ता बढ़ाने की इसमें अपार संभावनाएं है। परन्तु बदलाव की यह सरिता भी प्रभुतासंपन्न लोगों की दृष्टि मनोभावों से प्रदूषित हो जाती है। उदाहरण के लिए देश के अनेक स्कूलों में सूचना प्रौद्योगिकी और कम्प्यूटर का प्रयोग अभिभावकों पर प्रभाव डालने के लिए और अतिरिक्त फीस ऐंठने के अस्त्र के रूप में किया जा रहा है। प्रबंधकगण अपने प्रशासकीय नियंत्रण की आधुनिकीकरण का जामा पहनाकर प्रिसिंपल के माध्यम से न्यूनतम वेतन पर कार्यरत अध्यापकों और डरे–सहमें छात्र–छात्राओं पर अपनी गिद्ध दृष्टि रखने के उद्देश्य से क्लोज सर्किट टेलिविजन जैसे सशक्त माध्यम का दुरूपयोग कर रहे हैं। यह निरंतर पहरेदारी बच्चों के मन में एक अव्यक्त भय और उनके दिमाग में एक असुरक्षा की भावना को जन्म देती है। विद्यालय का ऐसा अविश्वासभरा वातावरण केवल डरपोक और दब्बू व्यक्तित्व का ही सृजन कर सकता है, निर्भीक और सृजनशील व्यक्तित्व का नहीं। पकड़े जाने या तबल किए जाने की आशंका से न तो अध्यापक और नहीं छात्र स्वाभाविक आचरण कर पाते हैं, सच्ची शिक्षा, सृजनात्मकता और नवाचार के लिए स्वतंत्र चिंतन और निर्बाध आत्माभिव्यक्ति अत्यावश्यक है। बिना गलती किए सीखना असंभव है। ऐसे शैक्षिक प्रशासक अपने प्रभाव क्षेत्र के अनावश्यक विस्तार द्वारा एक लोभ तो पैदा कर सकते है। परन्तु सार्थक चिंतक और प्रभावशाली व्यक्तित्व कदापि नहीं। शिक्षा प्रणाली भावी नागरिकों में अदम्य साहस,जोश और कुछ कर गुजरने की चाह का विस्तार नहीं कर पाती। वे या तो किताबी कीड़े बनने पर मजबूर हो जाते हैं या फिर जीवन के उद्देश्य से बेखबर दिशाहीन होकर भकटते रहते हैं।

अक्सर यह कहा जाता है कि बदलाव प्रकृति का नियम है और इसलिए शिक्षा का क्षेत्र भी इसका अपवाद नहीं हो सकता। परन्तु प्रकृति में बदलाव का एक उद्देश्य होता है, बदलाव संपूर्ण प्रणाली में नयी जान फूंक देता है, समस्त प्रकृति में एक सामंजसय दिखाई देता है, एक मधुरता, एक समभाव बना

रहता है। प्रकृति में प्रत्येक को वृद्धि के लिए छूट होती है। न तो वायु के प्रवाह में कोई भेदभाव किया जाता है और न ही धूप के पहुंचने में कोई रोक–टोक। वर्षा सभी को समान रूप से अमृत का सिंचन करती है। ठीक इसी भांति शिक्षा में बदलाव होना आवश्यक है किन्तु यह बदलाव ऐसे किया जाए ताकि सभी एक साथ बढ़ सकें, एक–दूसरे की मदद करते हुए समाज को आगे ले जा सकें और किसी प्रकार की ऊंच–नीच या भेदभाव का कोई स्थान न हो। बदलाव की दिशा सामाजिक, राजनीति से प्रेरित न होकर इसका उद्देश्य एक प्रगतिशील समाज का गठन होना चाहिए।

संदर्भः–

1. रूहेला, एस0पी (2010)–शिक्षा के दार्शनिक तथा समाजशास्त्रीय आधार, आगरा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।
2. गुप्ता एस0पी0 तथा अलका गुप्ता (2007)–भारतीय शिक्षा का तानाबाना, इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन।
3. कबीर, हुमायुं (1956)– स्वतंत्र भारत में शिक्षा राजपाल एवं सन्स, दिल्ली।
4. Loyd, Les. (Ed.), *Technology and Teaching*, Publication Information Medford, NJ : Information Today, 1997.
5. http://him.wikipedia.org